महावीर मन्दिर, पटना (बिहार) की पत्रिका 'धर्मायण'
की अंक संख्या 78 (अप्रैल-सितम्बर, 2009) में प्रकाशित

सोमवारी-व्रत-कथा

(पाण्डुलिपि से संशोधित संपादन)

हिन्दी अनुवाद के साथ

संपादक

पं. भवनाथ झा

एम. ए. (संस्कृत) एवं साहित्याचार्य,
प्रकाशन एवं शोध पदाधिकारी
महावीर मन्दिर, पटना
(बिहार)



महावीर मन्दिर प्रकाशन

2014

परिचय



नाम – पं. भवनाथ झा

पितृनाम – पं. अमरनाथ झा

जन्मस्थान – हटाढ़ रुपौली, झंझारपुर,
मधुबनी (बिहार)

जन्मतिथि – 23 सितम्बर, 1968 ई.

शिक्षा – एम. ए. (संस्कृत), साहित्याचार्य

प्रकाशित रचना –

(1) **बुद्धचरितम्** (अश्वघोष कृत महाकाव्य के अनुपलब्ध अंश का संस्कृत भाषा में काव्यमय अनुवाद), महावीर मन्दिर प्रकाशन से 2013 में प्रकाशित।

(2) **भ्रूण-पंचाशिका**- (कन्या-भ्रूणहत्या विषयक 50 श्लोकों का संस्कृत प्रबन्धकाव्य)

मातृभाषा मैथिली में दर्जनों कथाओं का विभिन्न पत्रिकाओं एवं संग्रहों में प्रकाशन।

सम्पादन –

(1) **अगस्त्य-संहिता**

(2) **दुर्गासप्तशती**

(3) म. म. परमेश्वर झा कृत **यक्षसमागमम्**

(4) म. म. रुद्रधर कृत **पुष्पमाला**

(5) म.म. पशुपतिकृत **व्यवहाररत्नावली**

(6) म.म. रुचिपतिकृत **नाह्निदत्तपञ्चविंशतिकाविवरणम्**।

धर्मायण, महावीर मन्दिर, पटना से प्रकाशित धार्मिक एवं सांस्कृतिक शोधपरक पत्रिका।

विशेष दक्षता –

मिथिलाक्षर एवं देवनागरी की पाण्डुलिपियों से सम्पादन का विशेष अनुभव।

सम्प्रति – प्रकाशन एवं शोध पदाधिकारी, महावीर मन्दिर, पटना

सम्पादकीय

सोमवती अमावस्या व्रत-विधान एवं कथा

(संशोधित संपादन)

▣ **भवनाथ झा**

यदि अमावस्या के दिन सोमवार पड़े, तो इस दिन सोमवती अमावस्या व्रत का विधान प्राचीन काल से उपलब्ध होता है। यह भगवान् विष्णु से सम्बद्ध व्रत है तथा सन्तान की रक्षा, वंश की उन्नति, सन्तान-प्राप्ति के लिए किया जाता है। इसमें मध्याह्न काल में पीपल के पेड़ के नीचे भगवान् विष्णु की पूजा होती है तथा एक फल हाथ में लेकर पीपल के वृक्ष की परिक्रमा कर उस फल को भगवान् पर अर्पित किया जाता है। इस प्रकार 108 परिक्रमा की जाती है। पूजा सम्पन्न कर सुहागिनों को पूआ, पकवान आदि खिलाया जाता है। यह व्रत महिलाओं के बीच प्रसिद्ध है।

'धर्मशास्त्र का इतिहास' ग्रन्थ में महामहोपाध्याय पाण्डुरंग वामन काणे ने लिखा है कि- ''सोमवार की अमावस्या अति पुनीत होती है; कालविवेक (492, भविष्यपुराण); हेमाद्रि (काल, 643); वर्षक्रिया कौमुदी (9) : आज के दिन लोग (विशेषत: नारियाँ) अश्वत्थ वृक्ष के पास जाती है, विष्णु पूजा करती है तथा वृक्ष की 108 बार प्रदक्षिणा करती है; व्रतार्क (पाण्डुलिपि, 350बी 356); धर्मसिन्धु (23); व्रतार्क का कथन है कि इसका उल्लेख निबन्ध में नहीं हुआ है, यह मात्र प्रचलन पर आधृत है।''

इन निबन्धों के अतिरिक्त 'रुद्रधर' (14वीं शती) ने भी 'वर्षकृत्य' में विस्तार से इसका उल्लेख किया है तथा 'भविष्यपुराण' से उद्धृत कथा भी दी है। वेंकटेश्वर स्टीम्, मुंबई से प्रकाशित 'भविष्य-पुराण' के संस्करण में यह कथा उपलब्ध नहीं है, किन्तु यह उपलब्ध 'भविष्य-पुराण' के संस्करण की अपनी क्षेत्रीय सीमा है। दूसरे संस्करणों में अन्वेषण कर इस कथा का मूल देखा जा सकता है। इसके लिए बंगाल से प्रकाशित संस्करण अन्वेष्टव्य है; क्योंकि उत्तर भारतीय पौराणिक पाठ बहुधा बंगाल के संस्करण में उपलब्ध होते हैं। किन्तु हेमाद्रि के 'चतुर्वर्ग-चिन्तामणि' में उल्लेख उपलब्ध होने से इतना तो निश्चित है कि 13वीं शती में यह व्रत भारत के विशाल क्षेत्र में प्रचलन में था। आज भी सन्तान की रक्षा तथा उन्नति के लिए अनेक स्थानों पर यह व्रत किया जाता है। किसी किसी क्षेत्र में पीपल के वृक्ष की परिक्रमा करते हुए कच्चा धागा लपेटने का व्यवहार है।

यह कथा म०म० रुद्रधर कृत 'वर्षकृत्य' में अनेक बार प्रकाशित हो चुकी है। सर्वप्रथम दरभंगा महाराज रमेश्वर सिंह के आश्रय में मीमांसक पं. जगद्धर झा के सम्पादन और परिवर्द्धन के साथ इसका प्रकाशन हुआ। इसके बाद उसी 'वर्षकृत्य' के अनेक संस्करण हुए हैं। मेरे सामने इस वर्षकृत्य के 5 संस्करण हैं- प्रथम प. रामचन्द्र झा द्वारा सम्पादित तथा चौखम्भा सुरभारती से प्रकाशित ग्रन्थ है।

दूसरा प. शशिनाथ झा के सम्पादन में उर्वशी प्रकाशन से 1998 प्रकाशित 'वर्षकृत्य' है। तीसरा वर्षकृत्य अत्यन्त जीर्ण है। आगे पीछे के सभी पृष्ठ खण्डित हैं। सम्भवतः यह दरभंगा से प्रकाशित प्रथम संस्करण है। वर्षकृत्य का एक अन्य संस्करण भी उपलब्ध हुआ है, जो लगभग 50 वर्ष प्राचीन प्रतीत होता है। संस्कृत विश्वविद्यालय से भी जो नवीन संस्करण प्रकाशित हुआ है उसके भी संगत पृष्ठों का अवलोकन मैंने किया है।

इन सभी संस्करणों का मिलान करने पर प्रतीत होता है कि सभी संस्करणों में सोमवारी व्रत कथा समान रूप से खण्डित रूप में प्रकाशित है। इस प्रकाशित पाठ में कई स्थलों पर अर्थ की संगति नहीं बैठ रही है। उदाहरण के लिए इस स्थल को देखें-

संकल्प्य सोमया सार्द्धमालस्यान्न पुनः कृता।
हेलया यत् कृतं कर्म वासुदेवस्य पूजनम्॥३३॥
अवाप्य सुमहद्राज्यं सर्वसन्तानवृद्धये।
इयन्तु मूढधीस्तेन कर्मणा यमसादनम्॥३४॥
कृतसंकल्पमात्रेण प्रभावेण भविष्यति।
सा याता पापभोगार्थं विधवात्वमवाप्स्यति॥३५॥

अर्थात्- ''सोमा के साथ संकल्प कर फिर इसने व्रत नहीं किया। इसने अवहेलनापूर्वक वासुदेव की जो पूजा की, इससे सब सन्तान की वृद्धि के लिए महान् राज्य पाकर। यह मूर्ख गुणवती उस कर्म से यमराज के घर गयी। केवल संकल्प कर लेने के प्रभाव से होगी। वह पाप का भोग करने के लिए विधवा होगी।''

यहाँ निश्चित रूप से कुछ पंक्तियाँ खण्डित हैं, जिसके कारण अर्थ की संगति नहीं बैठ रही हैं। इस स्थिति के निकारण के लिए मैंने सोमवारी व्रतकथा की पाण्डुलिपि की खोज की। मुझे मिथिलाक्षर में लिखी हुई एक पाण्डुलिपि मिली, जिसमें केवल सोमवारी व्रत कथा ही थी। इस स्थल पर जब मैंने पाण्डुलिपि का अवलोकन किया तो यह पाठ इस प्रकार मिला-

संकल्प्य सोमया सार्द्धमालस्यान्न पुनः कृता॥
हेलनं देवदेवस्य वासुदेवस्य च प्रभोः।
ततस्तेनैव पापेन विधवात्वमवाप्स्यति॥
सोमा च रजकी तेन व्रतेनैवात्र जन्मनि।
अवाप्य सुमहद्राज्यं सर्वसन्तानमृद्धिमत्॥
इयं गता वै तेनैव कर्मणा यमसादनम्॥
जाता संकल्पमात्रेण प्रभावेण भवद्गृहे॥

इसी तरह वर्त्तमान सम्पादन की श्लोक संख्या 57 से 69 तक के 11 श्लोकों के स्थान में प्रकाशित प्रति में केवल सात श्लोक तथा एक श्लोकार्द्ध है, जिनमें कथा भी अधूरी है।

शिवशर्मोवाच

वयं तत्र गमिष्यामो भगिन्या जीवनप्रदाम्।
सोमां तामानयिष्यामः सत्यमेतद्धि सुव्रते॥४८॥
इत्युक्त्वा भगिनीयुक्तो गतः सोमान्तिकं प्रति।
कालेन महता मार्गे बहून् क्लेशान् सहञ्च्छनैः॥४९॥
दृष्ट्वा महार्णवं तत्र विस्मयं परमं गतः।
कथं तत्र गमिष्यामि तीर्त्वा घोरं महार्णवम्॥५०॥
इति चिन्ताकुलस्तत्र वटमूले तु तस्थिवान्।
तस्मिन् दिने निराहारो ध्यायन्नासीज्जनार्दनम्॥५१॥
ततो डिम्भार्थमादाय सायं मांसं समागतः।
शावकाय ददौ मांसं न गृह्णाति क्षुधातुरः॥५२॥

शावक उवाच

वृक्षमूले पितः कश्चिद् ब्राह्मणोस्ति क्षुधातुरः।
कथं तस्मिन्नभुक्ते तु भोक्ष्येऽहमामिषं पितः॥५३॥
इत्युक्तो गृध्रराजस्तु फलान्यादाय सत्वरम्।
ब्राह्मणाय ददौ भुङ्क्ष्व तारयामीत्युवाच ह॥५४॥
ततो भुक्त्वा च भगिनीयुक्तो गृध्रेण तारितः।

प्रस्तुत संपादन का आधार

उपलब्ध पाण्डुलिपि के पाठ में सभी अर्थ संगत बैठ जाने के कारण इस पाण्डुलिपि से मैंने सम्पूर्ण कथा का सम्पादन किया है। प्रकाशित 'वर्षकृत्य' की प्रतियों में कुल 119 श्लोक हैं, जबकि इस पाण्डुलिपि में 132 श्लोक उपलब्ध हुए हैं।

इस पाण्डुलिपि का विवरण इस प्रकार है –

नाम- सोमवारान्वितामवास्या कथा
प्राप्ति-स्थान – हटाढ़ रुपौली, झंझारपुर, मधुवनी
स्वत्व – पं. भवनाथ झा
आधार – हस्तनिर्मित बसहा कागज।
आकार – 28 से. मी. लम्बाई एवं 9.5 से. मी. चौड़ाई।
लिखित स्थान – 25 से. मी. लम्बाई एवं 5 से. मी. चौड़ाई।
पत्र सं. – 8
पृष्ठ सं. - 15
प्रति पृष्ठ पंक्ति सं.- 8
प्रति पंक्ति अक्षर संख्या – 44-45
लिपि – मिथिलाक्षर या तिरहुता
लिपिकार – बच्चू शर्मा

लिपिकाल – अनुल्लिखित। किन्तु इसी लिपिकार की दूसरी पाण्डुलिपि ' अगस्त्य-संहितोक्ता रामनवमी व्रतकथा' में सन् 1262 साल (अर्थात् 1855 ई.) का उल्लेख।

आरम्भ – ॐ नमो भगवते वासुदेवाय। प्रथमं पञ्चदेवता पूजा। ततो गौरीपूजा। ततः कुशादिकमादाय।

अन्त– नमोऽद्य सोमवारान्वितायामवास्यायां तिथौ कृतैतद्विष्णवश्वत्थ-पूजनाष्टोत्तरशतप्रदक्षिण-कथाश्रवण-प्रतिष्ठार्थमेतावद्द्रव्यमूल्यक-हिरण्यमग्निदैवतय्यँथानामगोत्राय ब्राह्मणाय दक्षिणामहन्ददे। ब्राह्मणाय प्रतिपादयेत्। ॐ नमो भगवते वासुदेवाय। इदमलिखत् श्री बच्चूशर्म्मणा।।

कथा आरम्भ होने के पूर्व इस पाण्डुलिपि में पूजाविधि इस प्रकार है-

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय। प्रथमं पञ्चदेवता पूजा ततो गौरीपूजा। ततः कुशादिकमादाय।

ॐ अद्यामुकमासीयामुकपक्षीयामवास्यायां सोमवारान्वितायां तिथौ यावज्जीवसौभाग्यावैधव्य-समस्तभर्तृपुत्रजामातृगत-दीर्घायुष्ट्व-सर्व्वपापक्षयपूर्वक- तावत्समस्तपरिवारभूतात्मक- विष्णुलोकावाप्तिकामनया श्रीविष्णोःपूजनमहङ्करिष्ये।

इति संकल्प्य। ततो विष्णोः पूजनम्।

ॐ व्यक्ताव्यक्तस्वरूपाय सृष्टिस्थित्यन्तकारिणे।
आदिमध्यान्तहीनाय विष्णवे ते नमो नमः।

अनेन वारत्रयं पुष्पं दद्यात्। यज्ञोपवीतवस्त्रादिभिः पूजयेत्। ततः सोमा-धनवती-गुणवती-देवस्वामी-शिवस्वामी-रुद्रशर्मणः पञ्चोपचारैः पूजयेत्। ततोऽश्वत्थपूजा। ततः प्रदक्षिणसंकल्पः।

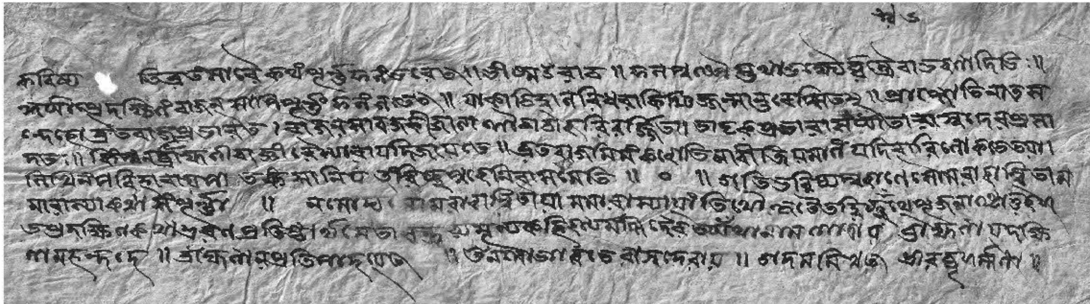
नमोऽद्यामुकमासीयामुकपक्षीयामावास्यायां सोमवारान्वितायां तिथौ यावज्जीवसौभाग्यावैधव्य-समस्तभर्तृपुत्रजामातृगत-दीर्घायुष्ट्व-सर्व्वपापक्षयपूर्वक-बहुतर-सौख्यावाप्ति-तावत्समस्त-परिवृतात्मक-विष्णुलोकावाप्ति-कामनया भगवतः श्रीविष्णोरश्वत्थ-सहितस्यामुकद्रव्येणाष्टोत्तरशत-प्रदक्षिणमहङ्करिष्ये।

इति संकल्प्य हिरण्य-रजत-फलादीनामन्यतमं गृहीत्वाष्टोत्तरशतप्रदक्षिणङ्कुर्यात्।

अश्वत्थ हुतभुग्भाग गोविन्दस्य सदाप्रिय।
अशेषं हर मे पापं वृक्षराज नमोऽस्तु ते।।

अनेन मन्त्रेणप्रदक्षिणङ्कुर्यात्।

इस पाण्डुलिपि के अन्तिम पृष्ठ की छाया यहाँ प्रस्तुत है-



प्रकाशित प्रति में उपलब्ध पाठान्तर के साथ यह कथा यहाँ दी गयी है। पाठान्तर के लिए मैंने प. शशिनाथ झा द्वारा सम्पादित तथा उर्वशी प्रकाशन, पटना से 1998 ई. में प्रकाशित प्रति का उपयोग किया है। इस प्रथम संस्करण की पृष्ठ सं. 22 से 28 तक सोमवती अमावस्या का प्रकरण है।

इस व्रत की कथा जो रुद्रधर कृत 'वर्षकृत्य' में उपलब्ध है, अनेक दृष्टि से अद्‌भुत है। इसकी भूमिका महाभारत युद्ध के बाद भीष्म और युधिष्ठिर की वार्ता से प्रारम्भ होती है। युद्ध में भले पाण्डवों की जीत हुई हो, किन्तु इन पाँचो भाइयों के सभी पुत्रों की हत्या हो जाती है। केवल मृत अभिमन्यु की पत्नी उत्तरा के गर्भ में एक शिशु बचा हुआ है। वह भी अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र से दग्ध हो चुका है। इस प्रकार, पाण्डवों का वंश विनाश के कगार पर है। इस वंश को आगे बढ़ाने के लिए चिन्तित युधिष्ठिर शरशय्या पर स्थित भीष्म से समाधान पूछते हैं। इसी के उत्तर में भीष्म पितामह गर्भस्थ शिशु की रक्षा के लिए उत्तरा के द्वारा करने योग्य 'सोमवती अमावस्या' व्रत के विधान तथा पूर्वकथा का उपदेश करते हैं।

<u>कथासार-</u>

प्राचीन काल में कांची नगरी में देवस्वामी नामक ब्राह्मण रहते थे। उनकी पत्नी का नाम धनवती तथा पुत्री का नाम गुणवती था। देवस्वामी के सात पुत्र भी थे। वे पतोहुओं, पुत्रों तथा एक पुत्री के साथ सुखपूर्वक रहते थे।

एक दिन उनके घर एक ब्राह्मण शिक्षा हेतु पधारे। देवस्वामी की पतोहुओं ने उनका अभिवादन किया तो ब्राह्मण ने उन्हें सौभाग्य, पुत्र, धन-धान्य से समृद्ध रहने का आशीर्वाद दिया। थोड़ी देर के बाद धनवती ने गुणवती को भिक्षा के साथ भेजी। गुणवती के अभिवादन करने पर ब्राह्मण ने धर्माचरण करने के लिए कहा। इस पर धनवती ने ब्राह्मण से धर्माचरण करने के लिए कहने का कारण पूछा तो ब्राह्मण ने कहा कि यह अपने विवाह के समय ही सात फेरे लगाते समय ही विधवा हो जाएगी, अतः इन्हे धर्म-कर्म करना चाहिए। इस वैधव्य का कारण स्पष्ट करते हुए ब्राह्मण ने आगे कहा कि पूर्वजन्म में इस गुणवती की एक सहेली सोमा थी। दोनों ने मिलकर सोमवारी अमावस्या का व्रत करने का संकल्प किया था। सोमा ने व्रत किया, पूजा की, किन्तु इसने आलस्य के कारण व्रत भी नहीं किया। इसी के कारण यह गुणवती इस जन्म में विवाह के समय विधवा हो जाएगी। व्रत कर लेने से सोमा इस जन्म में विशाल राज्य की स्वामिनी है तथा धन-धान्य-सन्तान आदि से भरी-पूरी है। गुणवती ने पूर्वजन्म में केवल संकल्प किया था, उस पुण्य के प्रभाव से यह आपके घर उत्पन्न हुई है।

यह सुनकर गुणवती की माता धनवती ने कहा कि आप यदि विपत्ति के विषय में जानते हैं तो इसके निवारण का उपाय भी जानते होंगे, अतः हमें बतलाएँ कि इस विपत्ति से उबरने का उपाय क्या है? इसपर ब्राह्मण ने उपाय बतलाया कि सिंहल द्वीप में सोमा नाम की धोबिन रहती है, वह गुणवती के विवाह के समय उपस्थित होकर यदि आशीर्वाद दे, तो गुणवती का सौभाग्य अटल रहेगा। यह कहकर ब्राह्मण दूसरे द्वार के लिए चल पड़े।

धनवती ने घर के अन्दर आकर यह बात अपने पति और पुत्रों को बतलायी। जब पुत्रों ने सुना कि सोमा सिंहल द्वीप में रहती है तो उन्होंने अपनी माता को फटकारते हुए कहा कि सिंहल द्वीप तक पहुँचने में तो बीच में समुद्र पड़ेगा। तुम कैसी माँ हो कि बेटी का सुहाग बचाने के लिए बेटों के प्राण खतरे में डालना चाहती हो! पुत्रों की यह बात सुनकर देवस्वामी ने क्रोध में आकर कहा कि मैं अपनी

बेटी का सुहाग बचाने के लिए सिंहल जाऊँगा। सात-सात पुत्रों के रहते अपुत्र की तरह मैं अवश्य सिंहल जाऊँगा। पिता का वचन सुनकर सबसे छोटा पुत्र देवशर्मा ने कहा कि मैं अपनी बहन के साथ सिंहल द्वीप जाऊँगा और सोमा के लेकर यहाँ उसके विवाह के समय लाऊँगा।

देवशर्मा गुणवती के साथ सिंहल द्वीप के लिए निकल पड़े। बहुत दिन चलने के बाद समुद्र के तट पर पहुँच गये। अब समुद्र कैसे पार करेंगे? इस चिन्ता से व्याकुल होकर दोनों एक वटवृक्ष के नीचे बैठ गये। इस वृक्ष पर एक गृद्धराज का घोसला था। बच्चे घोसला में थे और गीध बाहर गया हुआ था। इस बीच ये दोनों भाई-बहन गीध के बच्चों को मांस लाकर खिलाने लगे और उनकी देखभाल करने लगे। बीच बीच में अपनी समस्या भी उन बच्चों को सुनाते रहते। इस तरह चार दिन गुजर गये। चार दिनों के बाद जब गीध मांस लेकर लौटा और बच्चों को मांस खिलाने लगा तो बच्चों ने देवशर्मा और गुणवती द्वारा चार दिनों तक देखभाल करने की बात बतायी यह सुनकर गीध उन दोनों के प्रति कृतज्ञता से भर गया और वृक्ष से नीचे उतर कर उसने फल लाकर देवशर्मा और गुणवती को भोजन कराया तथा सुबह होने पर दोनों को अपनी पीठ पर लादकर समुद्र भी पार करा दिया।

इस प्रकार दोनों सिंहल पहुँचे। वहाँ सोमा का घर ढूँढ़कर प्रतिदिन प्रातःकाल उसके आँगन में झाड़ू लगाने लगे। ये सोमा के जगने से पहले ही अपना कार्य सम्पन्न कर लेते थे। इसी प्रकार एक वर्ष बीत गया। सोमा प्रतिदिन आँगन की सफाई देखकर अचम्भित होती रही कि कौन आकर मेरे आँगन में झाड़ू लगा जाता है? एक दिन सोमा ने छुपकर इन दोनों को पकड़ लिया। जब इन्होंने अपना परिचय दिया तो सोमा सर पीटने लगी कि मेरे आँगन में ब्राह्मण की बेटा-बेटी सफाई करते हैं तो मुझे पाप लगेगा!! इस पर देवशर्मा ने सोमा को सारी बातें बतला दी कि यह मेरी बहन गुणवती है और पूर्वजन्म के पाप के कारण विवाह के समय ही विधवा हो जायेगी। किन्तु आप यदि वहाँ चलने की कृपा करें तो इसका सुहाग बच जायेगा।

पूर्वजन्म में सोमवती अमावस्या व्रत करने के कारण धोबिन सोमा के पास ऐसी पुण्यशक्ति थी कि वह मृत व्यक्ति को भी जीवित कर सकती थी। इसलिए सोमा के राज्य में किसी की भी असमय मृत्यु नहीं होती थी। सोमा ने गुणवती और देवशर्मा को साथ चलने का आश्वासन देकर अपने नगर में घोषणा करा दी कि मैं नगर से बाहर जा रही हूँ। इस बीच में यदि किसी की भी मृत्यु हो, तो उसका शव सुरक्षित रखा जाये; उसे जलाया न जाये।

यह घोषणा कर सोमा आकाश मार्ग से गुणवती और देवशर्मा के साथ काञ्ची नगरी के लिए चल पड़ी। सोमा के पुण्य के प्रभाव से क्षण भर में सभी काञ्ची पहुँच गये। यहाँ गुणवती के विवाह की तैयारी होने लगी। गुणवती की माता ने सोमा की पूजा की और सोमा भी विवाह की तैयारी करने लगी। शुभ दिन एवं शुभ लग्न में सुदर्शन युवक रुद्रशर्मा के साथ गुणवती का विवाह होने लगा। विधि के विधान के अनुरूप ठीक सात फेरे लगाते समय वर रुद्रशर्मा का देहान्त हो गया। सभी परिजन रो पड़े, किन्तु सोमा ने कुछ भी देर के बाद संकल्प कर रुद्रशर्मा को जीवित कर दिया और हँसी-खुशी से विवाह सम्पन्न हुआ। इस प्रभाव को देखकर सबने सोमवती अमावस्या का व्रत रखा; सबने धोबिन सोमा की पूजा की और उसे विदा दी।

सोमा सिंहल लौट पड़ी। इसी बीच सिंहल में सबसे पहले सोमा के पुत्र की मृत्यु हुई, फिर उसके पति भी चल बसे। सोमा के दामाद की भी मृत्यु हो गयी। सबके शव सुरक्षित रख दिये गये थे।

जिस दिन सोमा अपने नगर पहुँची उस दिन सोमवती अमावस्या थी। रास्ते में एक वृद्धा मूली भरी टोकरी लेकर जा रही थी। उस वृद्धा ने सोमा से कहा कि जरा इस मूली की टोकरी मेरे सर से उतार दो। सोमा ने कहा कि आज मैंने भगवान् वासुदेव का व्रत किया है, आज मैं मूली का स्पर्श नहीं करूँगी। इसपर उस वृद्धा ने हँसकर कहा कि तुम्हें व्रत करने से क्या मिला? अपना छोड़कर दूसरे का प्राण बचाने बाहर चली गयी! इसपर सोमा ने कहा कि- "ऐसा नहीं कहना चाहिए। भगवान् तो करुणा से कोमल हैं। जो दूसरे का दु:ख मिटाता है उसके अपने दु:ख को श्रीहरि मिटाते हैं।" इतना कहकर सोमा आगे बढ़ी तो फिर एक रुई का गट्ठर सर पर लेकर जाती हुई महिला मिली। उस महिला ने भी बोझ उतार देने के लिए कहा। सोमा ने फिर वही उत्तर दिया कि आज व्रत के दिन मैं रुई का स्पर्श नहीं करूँगी। वह महिला भी उपहास करती हुई आगे बढ़ गयी।

सोमा रास्ते पर बढ़ती गयी। आगे उसे नदी के किनारे बेल का वृक्ष मिला। सोमा ने वही नदी में स्नान किया, बेल के वृक्ष के नीचे भगवान् विष्णु की पूजा की और एक सौ आठ बार उस वृक्ष की परिक्रमा की।

पितामह भीष्म बोले- हे राजन्! युधिष्ठिर सोमा ने हाथ में शक्कर लेकर जैसे-जैसे परिक्रमा करती गयी, उसके पति, दामाद, पुत्र सबके सब जीवित होते गये। जब सोमा घर लौटी तो उसकी पतोहू ने बतलाया कि कैसे सबके सब मृत होकर पुन: जीवित हो उठे थे। इसपर सोमा ने समझाया कि मैंने अपने पुण्य की शक्ति से कांची में गुणवती के पति को विवाह के समय जीवित कर दिया था। अत: पुण्य क्षीण हो जाने से मेरे परिजनों की मृत्यु हुई; किन्तु आज मैंने सोमवती अमावस्या का व्रत किया, भगवान् वासुदेव की पूजा की तथा मूली और रुई का स्पर्श नहीं किया। इस पुण्य के प्रभाव से ये सभी पुन: जीवित हो उठे। इसके बाद सोमा की सभी पतोहुएँ भी यह व्रत रखने लगीं और सब धन-धान्य-समृद्धि से पूर्ण होकर सुख भोगने लगे।

यह कथा सुनकर युधिष्ठिर ने इस व्रत का विधान भीष्म पितामह से पूछा। भीष्म पितामह ने बतलाया-

अमावस्या तिथिः पार्थ या स्यात् सोमसमन्विता।
तदा पुण्यतमः कालो देवानामपि दुर्ल्लभः॥

इस दिन प्रात:काल में नारियाँ नदी या तालाब में स्नान करे और मौन रहकर श्वेत रंग का नवीन वस्त्र पहनकर पीपल के वृक्ष के निकट जाकर शालग्राम शिला पर पूजन करे। पीपल के वृक्ष की भी पूजा करे तथा 108 बार वृक्ष की परिक्रमा मोती, सोना, चाँदी, हीरा आदि अथवा किसी खाद्य पदार्थ को हाथ में लेकर करे। साथ ही, यह पदार्थ ब्राह्मणों को और सुहागिनों में बाँट दे। ब्राह्मणों को दक्षिणा तथा भोजन देकर तब निरामिष भोजन करे। इस प्रकार भगवान् विष्णु की पूजा करें।

इतना कहकर भीष्म पितामह ने कहा कि हे राजन्! द्रौपदी, सुभद्रा और उत्तरा से यह व्रत करने के लिए कहें। इससे उत्तरा के गर्भ में स्थित वह शिशु दीर्घायु होगा। युधिष्ठिर ने इसे स्वीकार करते हुए एक शंका की कि जिस नारी की आर्थिक शक्ति कमजोर हो, वह सोना, चाँद, हीरा आदि से परिक्रमा कैसे कर सकतीं हैं? इस पर भीष्म पितामह ने कहा कि फल, मूल, वस्त्र या किसी भोज्य

पदार्थ से भी यह परिक्रमा की जा सकती है। हे राजन्! वह धोबिन जाति की सोमा भी इस व्रत के प्रभाव से इस प्रकार की मृतसंजीवनी शक्ति पा गयी। जो यह व्रत करते हैं या इसकी पूजा का दर्शन करते हैं, वे सभी पापों से मुक्त होकर शाश्वत विष्णुधाम में निवास करते हैं।

पूजन विधि

म०म० रुद्रधर कृत तथा मीमांसक जगद्धर द्वारा परिवर्द्धित 'वर्षकृत्य' में इसका विधान किया गया है कि सोमवती अमावस्या के प्रातःकाल में स्नान कर आगे आनेवाली सभी सोमवती अमावस्या का व्रत करने का संकल्प करें। यह संकल्प केवल पहले व्रत के दिन होगा। उस दिन पीपल के वृक्ष के नीचे पूजन-सामग्री की व्यवस्था कर संकल्प कर सबसे पहले षोडशोपचार से विष्णु की पूजा करें। इसके बाद निम्नलिखित देवताओं की पूजा पंचोपचार से क्रमशः करें- अश्वत्थ, धनवती, गुणवती, सोमा, शिवशर्मा, देवस्वामी, रुद्रशर्मा एवं काञ्चीपुरी। इसके बाद सपरिवार श्रीकृष्ण को चूड़ा और चीनी का भोग लगायें। तब दण्डवत् प्रणाम कर दाहिने हाथ में एक फल लेकर निम्नलिखित मन्त्र पढ़ते हुए वृक्ष की एक बार परिक्रमा करें।

अश्वत्थ हुतभुग्भाग गोविन्दस्य सदाप्रिय।
अशेषं हर मे पापं वृक्षराज नमोऽस्तु ते॥

परिक्रमा करते हुए पूजास्थल पर पहुँचकर इस फल को भगवान् पर समर्पित करें। पुनः दूसरा फल लेकर वही मन्त्र पढ़कर प्रदक्षिणा कर समर्पित करें। इस प्रकार एक सौ आठ बार परिक्रमा कर फल समर्पित करें। परिक्रमा के बाद कथा सुनकर सभी देवों का विसर्जन कर सभी 108 फलों को ब्राह्मणों को समर्पित करें। दक्षिणा देकर स्वयं हविष्यान्न भोजन करें।

सोमवारी अमावस्या की इस कथा में लोककथा के महत्त्वपूर्ण सूत्र हैं। वटवृक्ष पर गीध का घोसला, उसके नीचे दो मनुष्यों का आना, गीध द्वारा उनकी सेवा, गीध की पीठ पर चढ़कर समुद्र पार करना- ये सब लोककथा के तत्त्व हैं। फिर आकाश मार्ग द्वारा सिंहल से काञ्ची की यात्रा आदि इस पौराणिक आख्यान को जन-साधारण से जोड़ते हैं। अतः पौराणिक आख्यान का स्वरूप लेने पहले सोमा की यह कथा जन-मानस मे प्रचलित थी और सोमवती अमावस्या की यह पूजन-परम्परा तथा उस पूजन से प्राप्त शक्ति की महिमा से जन साधारण परिचित था। अतः यह कहना अनुचित नहीं होगा कि इस व्रत की परम्परा हेमाद्रि (1260-70 ई०) के बहुत पहले विद्यमान थी।

आज भी मिथिला की संस्कृति में विवाह के समय धोबिन को सम्मानित करने की लोक-परम्परा विद्यमान है। कन्या को आशीर्वाद के रूप में सबसे पहले उसी धोबिन के हाथ से रुपये आदि दिलाये जाते हैं। ऐसी मान्यता है कि धोबिन के पुण्य के प्रभाव से कन्या का सुहाग अटल रहेगा।



अथ कथा

वैशम्पायन उवाच।

शरशय्यागतं भीष्ममुपगम्य युधिष्ठिरः।
कृतप्रणामो धर्मात्मा इदं वचनमब्रवीत्॥१॥

वैशम्पायन बोले– शर-शय्या पर स्थित पितामह भीष्म के पास जाकर धर्मात्मा युधिष्ठिर ने प्रणाम कर यह कहा।

युधिष्ठिर उवाच।

हतेषु कुरुमुख्येषु भीमसेनेन कोपिना॥२॥
दुर्योधनकुमन्त्रेण[1] जातोऽस्माकं कुलक्षयः।
न सन्ति भुवि भूपालाः बालवृद्धादृते क्वचित्॥३॥
अवशिष्टा वयं पञ्च परेशरतसत्तम।
एकातपत्रमपि मे भीष्म राज्यं न रोचते॥४॥
अश्वत्थामास्त्रदग्धोसावुत्तरागर्भसम्भवः ।
अतो मे द्विगुणं दुःखं पिण्डविच्छेददर्शनात्॥५॥
किं करोमि क्व गच्छामि पितामह वदस्व तत्।
येन संपद्यते तात सन्ततिश्चिरजीविनी॥६॥

युधिष्ठिर बोले– हे तात! क्रोधी भीम के कारण तथा दुर्योधन के षड्यन्त्र के कारण मेरे कुल का नाश हो गया। इस पृथ्वी पर अभी बाल और वृद्ध को छोड़कर कोई राजा नही रहे। हे पितामह! हे परमेश्वर में आसक्त! अब हम केवल पाँच ही बच गये हैं। यह एकच्छत्र राज्य मुझे अच्छा नहीं लग रहा है। उत्तरा के गर्भ में स्थित शिशु भी अश्वत्थामा के अस्त्र से दग्ध हो गया है। अतः अपना वंश विच्छिन्न होता हुआ दिखाई पड़ने के कारण मेरे दुःख दूना हो गया है। हे पितामह! मुझे बतलाइएँ कि मैं क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, जिससे मेरी सन्तति चिरजीविनी रहे।

भीष्म उवाच।

शृणु राजन् प्रवक्ष्यामि व्रतराजमनुत्तमम्।
यस्य स्मरणमात्रेण सन्ततिश्चिरजीविनी॥७॥
अमावास्या यदा पार्थ सोमवारेण संयुता।
तस्यामश्वत्थमूले तु पूजयित्वा जनार्दनम्॥८॥

---

1. दुर्योधनापराधेन।

अष्टोत्तरशतं कुर्यात् तस्मिन् वृक्षप्रदक्षिणम्।
तावत् संख्यान्युपादाय रत्नधातुफलानि च॥९॥
व्रतराजमिदं राजन् विष्णोः प्रीतिकरं परम्।
[1]उत्तरां कारय त्वं सा जीवद्गर्भा भविष्यति॥१०॥
भविष्यति गुणी पुत्रस्त्रिषुलोकेषु विश्रुतः।
श्रुत्वा पैतामहं वाक्यं प्रत्युवाच युधिष्ठिरः॥११॥

भीष्म बोले– हे राजन्! सुनो। मैं एक श्रेष्ठ व्रत के सम्बन्ध में कहता हूँ, जिसके स्मरण मात्र से सन्तति चिरजीविनी हो जाती है। हे कुन्तीपुत्र! जिस दिन अमावस्या तिथि सोमवार से युक्त रहे, उस दिन पीपल के वृक्ष के नीचे विष्णु की पूजा कर उस वृक्ष की एक सौ आठ बार प्रदक्षिणा उतनी ही संख्या में रत्न, धातु अथवा फल लेकर करके यह व्रत किया जाता है, जिससे विष्णु भगवान् प्रसन्न होते हैं। उत्तरा से यह व्रत कराओ, जिससे उसका गर्भ जीवित हो जायेगा और तीनों लोकों में विख्यात गुणवान् पुत्र उत्पन्न होगा। पितामह भीष्म की यह वाणी सुनकर युधिष्ठिर ने पूछा।

युधिष्ठिर उवाच।

तद् व्रतं व्रतराजाख्यं विस्तरेण प्रकाशय।
केन प्रकाशितं मर्त्ये[2] केनेदं विहितं पुरा॥१२॥

जिसे आपने व्रतराज कहा है, इसे विस्तार से समझायें। संसार में किसने इसे किया तथा किसने प्रचारित किया?

भीष्म उवाच।

अस्ति सर्वत्र विख्याता काञ्ची नाम महापुरी।
ब्राह्मणक्षत्रविट्शूद्रैः स्वकर्मनिरतैः सदा॥१३॥
सुवेशैर्नागरजनैर्नारीभिः परिशोभिता[3]।
रूपचातुर्य्यवर्णाभिर्वेश्याभिः समलङ्कृता॥१४॥
[4]अलकेव कुबेरस्य शक्रस्येवामरावती।
तेजोमण्डलरत्नाढ्या पावकस्य महापुरी॥१५॥
रजताभ्रकसंकाशैः सौधहर्म्यैर्विराजिता।

संसार में विख्यात कांची नामक महान् नगरी है, जहाँ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र अपने अपने कार्यों में लगे रहते हैं। वह नगरी सुन्दर वेश-भूषा वाले नागरिकों और नारियों से शोभित है। रूप, चतुरता तथा गोरी-गोरी वेश्याओं से भी सजी हुई वह नगरी कुबेर की अलका तथा इन्द्र की अमरावती के समान शोभित हो रही है। चाँदी और अबरख के समान ऊँची अटारियों से शोभित तथा चमकते हुए रत्नों से भरी हुई वह नगरी अग्निदेव की नगरी के समान लग रही है।

---

1. या शृणोति कथां राजन् जीवगर्भा भवेत्सदा। 2. लोके। 3. ^{0}भिस्तु विशेषतः। 4. यहाँ से दो श्लोक मुद्रित प्रति में नहीं।

तत्र राजा महासेनो बभूवामितविक्रमः॥१६॥
तस्मिन् शासति भूचक्रे मोदन्तेऽमितविक्रमाः।
तस्य राज्ञो जनपदे न दुर्भिक्षं कदाचन[1]॥१७॥

प्राचीन काल में उस नगरी के अतुलनीय प्रतापी राजा महासेन हुए। पृथ्वी पर उनके शासनकाल में अतुलनीय पराक्रम वाले सभी प्रसन्न थे और उनके राज्य में कभी अकाल नहीं पड़ा।

तत्र कश्चिद् द्विजश्चाभूद्देवस्वामीति विश्रुतः।
तस्य भार्या भवत् ख्याता[2] नाम्ना धनवती शुभा॥१८॥
यथार्थनामधेया सा सावित्री प्रतिमा भुवि।
तस्यां संजनयामास पुत्रान् सप्त शुभावहान्॥१९॥
एकां दुहितरं चापि नाम्ना गुणवतीं शुभाम्।
कृतदारास्ततः पुत्राः विचरन्ति यथासुखम्॥२०॥
कन्या कुमारिकैवासीदेकरूपप्रियार्थिनी।[3]

उस नगरी में देवस्वामी नामक एक विख्यात ब्राह्मण रहते थे। अच्छे गुणों से सम्पन्न उनकी पत्नी का नाम धनवती था। वह अपने नाम के अनुरूप ही धनों से पूर्ण थी और पृथ्वी पर साक्षात् सावित्री के समान पतिव्रता थी। इस धनवती से देवस्वामी को सात शुभ गुणवान् पुत्र उत्पन्न हुए तथा गुणवती नामकी एक पुत्री भी उत्पन्न हुई। सभी पुत्र विवाह कर सुखपूर्वक रहते थे, किन्तु कन्या अपने समान वर की इच्छा रखनेवाली अर्थात् अविवाहिता थी।

अत्रान्तरे द्विजः कश्चिद् भिक्षार्थी[4] समुपागतः॥२१॥
दीप्यमानः स्वतेजोभिर्मूर्तिमानिव पावकः।
तद्द्वारं[5] समुपागम्य प्रयुक्तास्तेन चाशिषः॥२२॥
देवस्वामिस्नुषाः सप्त[6] समुत्थाय च सत्वराः।
भिक्षां प्रत्येकमानिन्युर्ददुस्तस्मै द्विजन्मने[7]॥२३॥
अवैधव्याशिषः प्रादात्ताभ्यः सौभाग्यसंय्युताः।

इसी बीच भिक्षा माँगने के लिए एक ब्राह्मण उनके घर पहुँचे। वे ब्राह्मण अपने तेज से जलती हुई अग्नि के समान चमक रहे थे। देवस्वामी के घर के द्वार पर पहुँचकर उन्होंने आशीर्वाद दिया तो देवस्वामी की सातो पतोहुएँ अलग अलग भिक्षा लेकर ब्राह्मण को दिया। ब्राह्मण ने भी उन्हें सौभाग्यवती होने का आशीर्वाद दिया।

मात्रा गुणवती पुत्री प्रेषिता सह भिक्षया॥२४॥[8]
विप्राय प्रददौ भिक्षां कृत्वा पादाभिवन्दनम्।
आशिषः प्रददौ तस्यै भव धर्म्मवती शुभे[9]॥२५॥

माता गुणवती न भी भिक्षा के साथ अपनी पुत्री को भेजी। पुत्री ने ब्राह्मण के चरणों की वन्दना कर उन्हें भिक्षा दी। इस पर ब्राह्मण ने उसे आशीर्वाद दिया कि तुम धर्म करो।

---

1. तस्मिन् राज्ये जनपदे न वैधव्यं न दुःखिताः। 2. शुभ्रा। 3. कन्या कुमारिकैवासीदनुरूपप्रियार्थिनी। 4. भिक्षार्थं। 5. पुनर्द्वारं। 6. सद्यः। 7. द्विजातये। 8. ततो गुणवती मात्रा प्रेषिता सा हि भिक्षवे। 9. सदा।

एतद् गुणवती[1] श्रुत्वा पुनः प्रत्याययौ गृहम्।
मात्रे निवेदयामास आशिषस्तेन[2] योजिताः॥२६॥

यह सुनकर गुणवती घर के अन्दर चली गई और उनसे अपनी माँ से इस आशीर्वाद की बात कह डाली।

श्रुत्वा धनवती पुत्रीं करे धृत्वा समाययौ।
प्रणामं कारयामास पुनस्तस्मै द्विजन्मने[3]॥२७॥
तथैवाशिषमुच्चार्य ददौ तस्यै पुनः पुनः।
श्रुत्वाशिषं धनवती तं विप्रं प्रत्युवाच ह॥२८॥

यह सुनकर धनवती पुत्री का हाथ पकड़कर द्वार पर आयी और पुनः ब्राह्मण को प्रणाम कराया। ब्राह्मण ने बार बार वहीं आशीर्वाद दिया। इस आशीर्वाद को सुनकर धनवती ने ब्राह्मण से पूछा।

धनवत्युवाच।

प्रसीद भगवन् विप्र वचनं मेऽवधारय।
स्नुषाभ्यः प्रणताभ्यो मे त्वया दत्ता वराशिषः॥२९॥
अवैधव्यकराः पुत्रसुखसौभाग्यदायिकाः ।
सुतायां प्रणतायाम्मे विपरीता इव त्वया[4]॥३०॥
भद्रे धर्मवती भूयाः प्रत्युदीर्य[5] पुनः पुनः।
आशीः प्रयुक्ता मे विप्र कारणं वद सत्वरम्॥३१॥

धनवती बोली– हे भगवन्! आप प्रसन्न होकर एक बात समझायें। मेरी पतोहुओं ने आपको प्रणाम किया तो आपने वैधव्यनाश, पुत्र, सुख, सौभाग्य का आशीर्वाद दिया, किन्तु मेरी पुत्री ने प्रणाम किया तो इसे उल्टे आशीर्वाद दिया कि तुम धर्म का आचरण करो। हे ब्राह्मण! इसका कारण मुझे शीघ्र बतायें।

द्विज उवाच

धन्यासि त्वं धनवति श्रूयतां भवितव्यता।
तस्यास्तु दत्ता योग्या वै आशिषो दुहितुस्तव॥३२॥
इयं सप्तपदीमध्ये वैधव्यं समवाप्स्यति।
धर्माचरणमत्यर्थं कर्त्तव्यं परमन्तया॥३३॥
मयाशिषः प्रदत्ता वै तेन[6] धर्मवती भव।

द्विज बोले– हे धनवती तुम धन्य हो! भविष्ट में जो निश्चित होनेवाला है, वह सुनो। आपकी पुत्री को मैंने उसी के योग्य आशीर्वाद दिया। यह सात फेरे लगाते समय विधवा हो जायेगी। इसलिए इसे विशेष रूप से धर्म का आचरण करना चाहिए। इसलिए मैंने इसे धर्म करने का आशीर्वाद दिया।

---

1. ता वै। 2. तन्नियोजिताः। 3. द्विजातये। 4. सुतायाः प्रणतायास्तु विपरीतवरास्त्वया। 5. इत्युदीर्य। 6. सर्व॰।

एवं धनवती श्रुत्वा चिन्ताकुलितचेतना[1]।।३४।।
उवाच वचनं दीनं प्रणिपत्य पुनः पुनः।[2]
[3]किं कारणं द्विजश्रेष्ठ वैधव्यं समवाप्स्यति।
इयं सप्तपदीमध्ये तन्नो कारणमावद[4]।।३५।।

ऐसा सुनकर धनवती चिन्ता से व्याकुल होकर दीन भाव से बार बार गिरकर बोली– हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! किस कारण से यह सात फेरे लगाते समय ही विधवा हो जायेगी, इसका कारण कहिए।

द्विज उवाच।

अनया पूर्वजनुषि सोमवारान्विता कुहू।
संकल्प्य सोमया सार्द्धमालस्यान्न पुनः कृता।।३६।।
[5]हेलनं देवदेवस्य वासुदेवस्य च प्रभोः।
ततस्तेनैव पापेन विधवात्वमवाप्स्यति।।३७।।
सोमा च रजकी तेन व्रतेनैवात्र जन्मनि।
अवाप्य सुमहद्राज्यं सर्वसन्तानमृद्धिमत्।।३८।।
इयं गता वै तेनैव कर्मणा यमसादनम्।
जाता संकल्पमात्रेण प्रभावेण भवद्गृहे।।३९।।

ब्राह्मण बोले– पूर्वजन्म में इसने सोमा के साथ सोमवती अमावस्या का व्रत करने का संकल्प कर आलस्य के कारण व्रत नहीं किया। इसने प्रभु देवाधिदेव वासुदेव की अवहेलना की। उसी पाप से यह विधवा होगी। धोबिन सोमा उसी व्रत के करने से इस जन्म में सभी वस्तुओं तथा सन्तति से भरा-पूरा राज्य पाकर रह रही है। यह गुणवती उसी पाप के साथ यमराज के घर गयी, किन्तु केवल संकल्प करने से जो पुण्य हुआ, उसके प्रभाव से आपके घर उत्पन्न हुई।

धनवत्युवाच।

अपायं विप्र[6] जानासि उपायमपि वेत्स्यसि।
वैधव्यभंगो येन स्यात् तन्निवेदय माचिरम्।।४०।।

धनवती बोली– हे विप्र! आप यदि विपत्ति को जाने हैं तो उसके निवारण का उपाय भी अवश्य जानते होंगे।जल्दी बतलाइये कि विधवा होने का यह योग कैसे छूटेगा।

द्विज उवाच।

अस्या वैवाहिकं कर्म यदा भवति शोभने।
सोमा ददाति चेत् सत्यं तदा वैधव्यभञ्जनम्।।४१।।

---

1. चिन्ताकुलितचेतसा। 2. मुहुर्मुहुः। 3. धनवत्युवाच। 4. तत्र कारणमुच्यताम्। 5. हेलया यत्कृतं कर्म वासुदेवस्य पूजनम्। अवाप्य सुमहद्राज्यं सर्वसन्तानवृद्धये। इयन्तु मूढधास्तेन कर्मणा यमसादनम्। कृतसंकल्पमात्रेण प्रभावेण भविष्यति। सा यता पापभोगार्थं विधवात्वमवाप्स्यति। 6. अपायमपि।

ब्राह्मण ने कहा– इसका जब विवाह होगा तब यदि सोमा अपना पुण्य इसे दे तो विधवा होने का योग छूट जायेगा।

धनवत्युवाच।

कासौ सोमा त्वया प्रोक्ता का जातिः कुत्र संस्थिता[1]।
तन्मे वद महाभाग न कालो विस्तरोऽस्ति मे॥४२॥

धनवती बोली– यह सोमा कौन है? उसकी जाति क्या है? वह कहाँ रहती है? मुझे यह सब शीघ्र बतलाइये। मेरे पास अब अधिक समय नहीं है।

द्विज उवाच।

सोमा सा रजकी जातिः स्थितिस्तस्यास्तु सिंहले।
सा चेदायति ते वेश्म तदा वैधव्यभञ्जनम्॥४३॥
इत्युक्त्वा ब्राह्मणोऽन्यत्र गतो भिक्षाव्रतेच्छया।
धनवत्यपि पुत्रेभ्य उवाच वचनं तदा॥४४॥

ब्राह्मण बोले– 'सोमा धोबिन जाति की है और वह सिंहल द्वीप में रहती है। वह यदि तुम्हारे घर आ जाती है, तो इसका वैधव्य छुट जायेगा।' ऐसा कहकर ब्राह्मण भिक्षा के लिए दूसरी जगह चले गये। तब धनवती ने भी जाकर अपने पुत्रों से यह बात कही।

धनवत्युवाच।

[2]इयं दुर्ल्ललिता पुत्री पुत्रेभ्योऽपि हिता मम।
तस्यास्त्वनिष्टः सुमहानित्युक्तस्तेन भिक्षुणा॥४५॥
इयं सप्तपदीमध्ये विधवा इति निश्चितम्।
प्रतीकारस्त्वेक एव सोमा गुणवती शुभा॥४६॥
ददात्यागत्य[3] चेत् सत्यं तदा वैधव्यभञ्जनम्।
यदि वोऽस्ति[4] पितुर्भक्तिर्मातुर्वचनगौरवम्॥४७॥
प्रयान्तु सहिताः स्वस्रा[5] सोमानयनहेतवे।

यह मेरी दुलारी बेटी है और पुत्रों से भी प्यारी है। इसके महान् अनिष्ट की बात उस भिक्षु ने कही है कि यह सात फेरे लगाते समय विधवा हो जायेगी, यह निश्चित है। इसका एक ही उपाय सोमा है। वह यदि आकर अपना पुण्य इसे दे तो वैधव्य छुट जायेगा। यदि तुम्हें अपने पिता के प्रति भक्ति हो और माता का वचन मानो तो सोमा के लिवाने के लिए अपनी बहन के साथ जाओ।

पुत्रा ऊचुः।

कुत्र सा वसते सोमा का जातिः केन संगता॥४८॥
न जानीमो गृहन्तस्याः मार्गं तस्य न[6] विद्यते।
कथं तत्र च गन्तव्यं मातस्तद्वेश्म कीदृशम्॥४९॥

---

1. संस्थितिः। 2. मुद्रित प्रति में यहाँ से दो श्लोक अनुपलब्ध। 3. ददाति सोमा। 4. तस्मादस्ति। 5. याहि स्वस्रा च सहितः। 6. यत्र च।

वह सोमा कहाँ रहती है? उसकी क्या जाति है? उसके साथ और कौन कौन रहते हैं? उसका घर मैं नहीं जानता । रास्ता भी अज्ञात है, तब हे माता! वहाँ कैसे जायेंगे? उसका घर कैसा है?

धनवत्युवाच

जात्या सा रजकी सोमा सर्व्वलक्षणसंयुता।
वसते[1] सिंहलद्वीपे पुत्रसन्तानसंयुता[2]॥५०॥
सोमा प्रसिद्धा रजकी निवासः सिंहले श्रुतः[3]।
तां समानय शीघ्रेण सम्प्रसाद्य यथाबलम्॥५१॥

धनवती बोली– वह सभी शुभ लक्षणों से सम्पन्न जाति से धोबिन है और पुत्र एवं सन्तति के साथ सिंहल द्वीप में रहती है। धोबिन सोमा को सब जानते हैं और उसके निवासस्थान सिंहल भी प्रसिद्ध है। भरसक कोशिश कर उसे प्रसन्न कर शीघ्र लाओ।

पुत्रा ऊचुः।

[4]ज्ञातं मातर्भवत्तत्तत् पुत्रीस्नेहो महाँस्तव।
यतो देशान्तरं पुत्रान् प्रस्थापयसि दुर्गमम्॥५२॥
अन्तरा दुस्तरं सिन्धुं शतयोजनविस्तरम्।
अशक्यं गमनं तत्र न क्षमास्तेन ते वयम्॥५३॥

पुत्रों ने कहा– माँ! मैं जान रहा हूँ कि तुम्हारे मन में अपनी पुत्री के प्रति महान् स्नेह है, इसलिए पुत्रों को दुर्गम और दूसरे देश में भेज रही हो, जिसके बीच में सौ योजन चौड़ा समुद्र है। वहाँ जाना सम्भव नहीं है। हमलोग वहाँ जाने में असमर्थ हैं।

देवस्वाम्युवाच

अपुत्रः सप्तभिः पुत्रैरहं यास्यामि सिंहलम्।
आनयिष्यामि तां सोमां पुत्रीवैधव्यनाशिनीम्॥५४॥
[5]एवं वादिनि सक्रोधे देवस्वामिनि तत्क्षणे।
शिवस्वामी कनिष्ठोऽस्य पुत्रः प्रोवाच सत्तमः॥५५॥

देवस्वामी बोले– मेरे सात सात पुत्र हैं, किन्तु लगता है जैसे अपुत्र होऊँ। मैं ही सिंहल जाऊँगा और उस सोमा को लाऊँगा, जिससे मेरे पुत्री का वैधव्य योग छुटेगा।' क्रोध से भर कर जब देवस्वामी ने ऐसा कहा तब उनका सबसे छोटा पुत्र शिवस्वामी, जो सबसे भला था बोला।

शिवस्वाम्युवाच।

नैवं वद महाभाग रोषावेशवशंगतः।
मयि तिष्ठति कः शक्तो द्वीपं गन्तुं हि सिंहले॥५६॥
[6]अहं मातर्गमिष्यामि सोमामानयितुं किल।
मातुराज्ञां करिष्यामि भगिन्याः जीवनप्रदाम्॥५७॥

---

1. रमते। 2. पुत्र गच्छानयस्व ताम्। 3. द्विपे। 4. कथं तत्र गमिष्यामोह्यन्तरोऽस्ति महार्णवः। पुत्रीस्नेहेन पुत्रान् नो हन्तुमिच्छसि दुर्भगे। 5. श्लोक संख्या 55-56 मुद्रित प्रति में अनुपलब्ध। 6. श्लोक संख्या 57-69 तक का पाठान्तर भूमिका में।

शिवस्वामी बोले– 'हे पिता! महाभाग! क्रोध में आकर ऐसा न कहें। मेरे रहते सिंहल द्वीप और कौन जा सकता है! हे माता! मैं सोमा को लाने के लिए जाऊँगा। माता की उस आज्ञा का पालन करूँगा, जिससे बहन का वैधव्य-योग छुटे।'

इत्युक्तः सहसोत्थाय प्रणम्य शिरसा गुरुम्।
प्रतस्थे सहितः स्वस्रा द्वीपं सिंहलसंज्ञकम्॥५८॥
स कियद्भिर्दिनैर्गत्वा तीरं प्राप्य सरित्पतेः।
सन्तर्तुमुदधिं तत्र प्रकारमकरोत्ततः॥५९॥

ऐसा कहता हुआ वह झटपट उठकर शिर झुकाकर गुरु को प्रणाम कर बहन के साथ सिंहल द्वीप के लिए चल पड़ा। कइ दिनों तक चलने के बाद समुद्र के किनारे पर पहुँचकर समुद्र को पार करने का उपाय करने लगा।

स ददर्श सुविस्तीर्णं न्यग्रोधद्रुममन्तिकम्।
तत्कोटरसुखासीनान् गृध्रराजस्य शावकान्॥६०॥
स मांसं भोजयामास कोमलं मनसेप्सितम्।
स्वकार्य्यं कथयामास गृध्रराजसुतेषु सः॥६१॥

उसने एक विशाल वटवृक्ष देखा। उस वृक्ष के एक कोटर में उसने गृद्धराज के बच्चों को सुखपूर्वक रहते हुए देखा।उन बच्चों को उसने उनकी पसंद का कोमल मांस खिलाया और उनसे अपने कार्य की बात भी कही।

तत्पादपतले स्थित्वा ताभ्यां नीतं चतुर्दिनम्।
आजगाम ततो गृध्रो गृहीत्वा शिशुभोजनम्॥६२॥
भोजनं दत्तमपि ते भुञ्जते न च शावकाः।
पप्रच्छ च ततो गृध्रः शावकानतिविह्वलः॥६३॥

उस वृक्ष के नीचे रहते हुए उनके चार दिन बीत गये। तब गृद्धराज स्वयं बच्चों के लिए भोजन लेकर वहाँ आया। भोजन देने पर भी बच्चे खा नहीं रहे थे। तब उसने बेचैन होकर बच्चों से पूछा।

गृध्र उवाच।

कथं न भुज्यते मांसं भवद्भिः क्षुधितैरपि।
आनीतं कोमलं मासं भवद्योग्यमिदं मया॥६४॥

गृद्ध बोले– तुमलोग भूखे हो फिर भी मांस क्यों नहीं खा रहे हो। देखो! मैं तुम्हारे लोयक कोमल मांस लेकर आया हूँ।

शावका ऊचुः।

एतद्वृक्षतले तात मानवौ द्वौ च तिष्ठतः।
सन्तुष्टीकृतयोस्तात तयोर्भुञ्जामहे वयम्॥६५॥
एतच्छ्रुत्वा गृध्रराजः करुणाकुलचेतनः।
तयोरन्तिकमागत्य वचनं समभाषत॥६६॥

बच्चों ने कहा– "इस वृक्ष के तले दो मनुष्य हैं, उन्होंने हमें खिलाकर सन्तुष्ट कर दिया है, इसलिए हम नहीं खा रहे हैं।" यह सुनकर करुणा से भरा हुआ गृद्ध शिवस्वामी और गुणवती के समीप आकर यह बोला।

गृध्र उवाच।

ज्ञातस्तु युवयोः कामो भोजनं क्रियतामिदम्।
पारमुत्तारयिष्यामि जलधेः प्रातरेव तु॥६७॥

गृद्ध बोले– "तुम दोनों की इच्छा मैं जान चुका हूँ। अब यह भोजन करो। कल सुबह में समुद्र पार करा दूँगा।"

ततो रात्रौ व्यतीतायामुदिते च दिवाकरे।
पारमुत्तारितौ तौ तु गृध्रराजेन वेगिना॥६८॥

रात बीत जाने पर जब सूर्योदय हुआ तब तेज गति से चलने वाले गृद्ध ने उन दोनों को समुद्र पार करा दिया।

कालेन महता मार्गे बहून् क्लेशान् समुद्वहन्।
सिंहलद्वीपमागत्य स्थितौ सोमागृहान्तिके॥६९॥

बहुत दिनों तक चलते चलते, राह में अनेक कष्टों को झेलते दोनों सिंहल द्वीप पहुँचकर सोमा के घर के समीप ठहरे।

तत्र गत्वाथ विप्रोऽसौ भगिन्या सार्द्धमन्तिकम्।
निवासं मार्जयत्यस्याः प्रातरुत्थाय दीनवत्॥७०॥

वहाँ जाकर यह ब्राह्मण अपनी बहन के साथ प्रातःकाल उठकर सोमा के आँगन की सफाई कंगाल की तरह करने लगे।

गते बहुतरे काले दृष्ट्वा सोमा समाकुला[1]।
केनेदं क्रियते नित्यं मम गेहस्य मार्जनम्॥७१॥

बहुत दिन बीत जाने पर सोमा यह देखकर सोचने लगी कि कौन प्रतिदिन मेरे घर की सफाई करता है!

एकदा तत्परीक्षार्थं निभृतं सा स्थिता निशि।
ददर्श ब्राह्मणसुतौ मार्जयन्तौ गृहाङ्गणम्॥७२॥
लिम्पन्तौ प्राङ्गणं प्रातर्भ्रातरं स्वसृसंयुतम्[2]।
पप्रच्छ सोमा साश्चर्यं कौ युवां कथ्यतामिति॥७३॥
ऊचतुस्तौ[3] तदा पृष्टावावां ब्राह्मणदारकौ।
मासान् द्वादश युष्माकं कुर्मः प्राङ्गणमार्ज्जनम्॥७४॥

---

1. समागता। 2. प्रातः सा भ्रात्रा सहिता किल। 3. ऊचतुस्तां।

इसकी जाँच के लिए एक दिन वह रात में छिपकर बैठ गई और उसने ब्राह्मण के पुत्र और पुत्री को सफाई करते देख ली। वे दोनों आँगन लीप रहे थे। बहन के साथ जो भाई शिवस्वामी था, उसे सोमा ने अचरज के साथ पूछा कि तुमदोनों कौन हो, यह बतलाओ। उन दोनों ने कहा कि हम ब्राह्मण देवस्वामी के पुत्र एवं पुत्री हैं और बारह महीने से आँगन की सफाई कर रहे हैं।

सोमोवाच।

दग्धास्मि खलु नष्टास्मि ब्राह्मणौ गृहमार्जकौ।
कां गतिं न गमिष्यामि पापादस्मान्न संशयः॥७५॥[१]
पापजातिरहं ख्याता रजकी सर्वतो द्विज।
कथं त्वं ब्राह्मणो भूत्वा विरुद्धं मे चिकीर्षसि॥७६॥

सोमा बोली– 'हाय! मैं बरबाद हो गयी! ब्राह्मण की सन्तानें हमारे घर की सफाई करें!! इस पाप से सचमुच मेरी कौन सी गति नहीं होगी! मैं तो सबसे छोटी जाति की धोबिन हूँ। क्यों तुमलोग ब्राह्मण होकर मेरे विपरीत कार्य कर रहे हो?

शिवस्वाम्युवाच।

एषा गुणवती नाम स्वसा मम सुलोचने[२]।
इयं सप्तपदी मध्ये विधवात्वमवाप्स्यति॥७७॥
तव सान्निध्यमात्रेण भवेद्वैधव्यभञ्जनम्।
इत्युक्तं ब्राह्मणेनास्यै भिक्षुणामिततेजसा॥
अतो नित्यं सह स्वस्रा दासकर्म करोम्यहम्[३]॥७८॥

शिवस्वामी ने कहा– " यह मेरी बहन गुणवती है। यह सात फेर लगाते विधवा हो जायेगी। आप यदि वहाँ रहें तो यह वैधव्य योग छुट जायेगा, ऐसा एक ब्राह्मण भिक्षु ने इसके विषय में कहा है। अतः अपनी बहन के साथ मैं नौकरों का कार्य कर रहा हूँ।

सोमोवाच।

अतः परं न कर्त्तव्यं यास्यामि सदनं तव[४]।
इत्युक्त्वा गृहमागत्य स्नुषाभ्यः प्रत्युवाच ह॥७९॥
यः कश्चिन्मम राज्ये तु म्रियते मानवः स्वयम्[५]।
तथैवारक्षणीयोऽसौ यावदागम्यते मया॥८०॥
कस्यचिद् वचनात्सोऽपि न दग्धव्यः कथञ्चन।
इत्युक्त्वा सा स्नुषाः सोमा[६] ययौ काञ्चीपुरीं प्रति॥८१॥
स्वयमाकाशमार्गेण प्रततार महार्णवम्।
प्राप्ता काञ्चीपुरी रम्या निमेषार्द्धेन सोमया[७]॥८२॥

---

1. कां गतिं हन्त यास्यामि पापादस्मादसंशयम्। 2. सुलोचना। 3. करोमि ते। 4. तव सादनम्। 5. क्वचित्। 6. स्नुषास्तु। 7. प्राप्ता काञ्चीपुरीं तान्तु निमेषात् स्व प्रभावतः।

सोमा बोली– आजके बाद से यह कार्य न करें। मैं आपके घर जाऊँगी।' इतना कहकर वह घर के भीतर जाकर अपनी पतोहुओं से बोली– 'मेरे राज्य में यदि किसी मनुष्य की स्वयं मृत्यु हो जाये तो जबतक मैं लौट कर नहीं आती, उसे सुरक्षित रखा जाये, उसे किसी हालत में जलाया न जाये।' पतोहुओं को ऐसा कहकर सोमा कांचीपुरी के लिए चल पड़ी और स्वयं आकाशमार्ग से समुद्र पार कर गयी। पलक झपकते ही वे सब सोमा के साथ सुन्दर कांची नगरी पहुँच गये।

सोमां दृष्ट्वा धनवती ततः पूजामकल्पयत्।
अत्रान्तरे[1] शिवस्वामी मातुरादेशतत्परः॥८३॥
भगिन्याः[2] सदृशं रम्यं गुणिनं चानयत्तदा[3]।
ब्राह्मणं रुद्रशर्माणं चन्द्रवत्प्रियदर्शनम्॥८४॥

सोमा को देखकर धनवती ने उसकी पूजा की। इसी बीच माता के आदेश को पूरा करते हुए शिवस्वामी ने अपनी बहन के योग्य सुन्दर एवं गुणवान् ब्राह्मण को लाये जो देखने में चन्द्रमा के समान सुन्दर था।

ततः सा रजकी सोमा वैवाहिकमकल्पयत्।
शुभे लग्ने सुनक्षत्रे देवस्वामी स्वकन्यकाम्[4]॥८५॥
ददौ तस्मै गुणवतीं गुणिने रुद्रशर्मणे।

तब उस धोबिन सोमा ने विवाह की तैयारी की। शुभ लग्न और शुभ नक्षत्र में देवस्वामी ने अपनी कन्या गुणवती को रुद्रशर्मा को दिया।

ततो विवाहकर्मान्ते हूयमाने हुताशने॥८६॥
ततः सप्तपदीं कुर्वन् रुद्रशर्मा मृतस्तदा।
रुरुदुर्बान्धवाः सर्वे स्थिता सोमा निराकुला॥८७॥
आक्रन्दः सुमहानासील्लोकानां पश्यतां तदा।
ततो धनवती प्राह सोमां दैन्यसमावृता[5]॥८८॥
सोमे किं क्रियतामत्र ब्राह्मणोऽयं मृतः स्वयम्।
ततः सोमा निजं पुण्यं द्विजमृत्युविनाशनम्॥८९॥
संकल्प्य जीवयामास तं तदा द्विजसत्तमम्[6]।
रुद्रशर्मा द्विजस्तत्र व्रतराजप्रसादतः[7]॥९०॥
उन्मील्य नेत्रे उजृम्भ्य सुप्तवत्सहसोत्थितः[8]।

तब वैवाहिक कर्मों के अन्त में आहुति समाप्त हो जाने पर जब सात फेरे लगाये जाने लगे तब रुद्रशर्मा की मृत हो गयी। सभी परिजन रोने लगे पर सोमा व्याकुल नहीं हुई। लोगों के देखते ही देखते चारों ओर सब हाहाकार करने लगे। तब धनवती दीनतापूर्वक सोमा से बोली- 'हे सोमा! यह ब्राह्मण तो अपने आप मर गया।' तब सोमा ने ब्राह्मण की मृत्यु का निवारण करने का संकल्प किया और उसे जीवित कर दिया। सोमवती अमावस्या के व्रत की कृपा से ब्राह्मण रुद्रशर्मा आँखें खोल कर तुरत उठ बैठे, जैसे सोकर उठे हों।

---

1. तत्रान्तरे। 2. स्वसुश्च। 3. वरञ्चावरयत्तदा। 4. तु। 5. समन्विता। 6. द्विजं राजसत्तमम्। 7. प्रभावतः। 8. सुप्तप्रायादिवोत्थितः।

एवं निर्वर्त्य विधिवत् विवाहं मुदिताभवत्॥९१॥
संपूज्य सोमां विधिवत् यथाविभवसारतः[1]।
व्रतराजं ततः सर्वे चक्रुस्तद्गृहवासिनः॥९२॥
आमन्त्र्याथो धनवतीं सोमा सा प्रययौ गृहम्।

इस प्रकार विधानपूर्वक विवाह सम्पन्न कर धनवती प्रसन्न हुई और सोमा की पूजा अपनी शक्ति के अनुसार करने लगी। उस घर में रहनेवाले सभी लोगों ने यह श्रेष्ठ व्रत किया। तब सोमा धनवती को भी अपने घर आने का न्योंता देकर अपने घर चली गयी।

एवमाश्वास्य रजकी जीवयित्वा द्विजोत्तमम्॥९३॥
जगाम हर्षसम्पन्ना[2] पश्चाश्चर्यं युधिष्ठिर।

हे युधिष्ठिर! इस प्रकार वह धोबिन ब्राह्मण को जीवित कर खुशी खुशी अपने घर चली गयीं, इस आश्चर्य को देखो।

अत्रान्तरे गृहे तस्याः प्रथमं तनयो मृतः॥९४॥
पुनः स्वामी ततस्तस्याः जामाता तदनन्तरम्।
तथैव रक्षिताः सर्वे स्नुषाभिस्तु प्रयत्नतः॥९५॥
श्रीर्विहीनं पुनर्गेहं सर्वे च विलयं गताः।

इस बीच सोमा के घर में सबसे पहले उसके पुत्र की मृत्यु हुई। फिर उसके स्वामी चल बसे। इसके बाद सोमा के दामाद की भी मृत्यु हो गयी। जिस प्रकार सोमा कह गयी थीं, उसी प्रकार सोमा की पतोहुओं ने यत्नपूर्वक सबको सुरक्षित रखा। घर की लक्ष्मी चली गयी, सबकुछ नष्ट हो गया।

आगच्छन्त्यास्तदा तस्याः सोमवारान्विता पथि॥९६॥
अमावास्या बभूवाथ मृतस्य जीविनी पथि।
सा ददर्श समायान्तीं[3] वृद्धां काञ्चित् स्त्रियं पथि॥९७॥
मूलभारभराक्रान्ता प्राह सातीवदुःखिता।
अवतारय मे पुत्रि मूलभारं शिरः स्थितम्॥९८॥
एतद्भारभराक्रान्ता जीवितुं न सहाम्यहम्।

जिस दिन सोमा अपने घर लौट रही थी, उस दिन रास्ते में ही मृतकों को जिलानेवाली सोमवती अमावस्या का दिन पड़ा। रास्ते में एक बूढ़ी महिला आती हुई दिखाई पड़ी। मूली के भार से व्याकुल उस बूढ़ी ने बहुत दुःख से कहा कि बेटी! मेरे माथे पर जो यह भार है, उसे उतार दो। इसके भार से अब मैं जी नहीं सकूँगी।

सोमोवाच

अमावास्याद्य भो वृद्धे सोमवारेण संयुता॥९९॥
व्रतं श्रीवासुदेवस्य नियमेन मया कृतम्।
किं करोमि व्रते चास्मिन् मूलकं न स्पृशाम्यहम्॥१००॥

---

1. धनज्ञानानुसारतः। 2. सम्पूर्णा। 3. मृतसञ्जीविनी खलु। 4. ततो यान्तीम्।

सोमा ने कहा– हे वृद्धे! आज सोमवार से युक्त अमावस्या है। आज मैंने नियम से भगवान् वासुदेव का व्रत किया है। इस व्रत में मैं मूली का स्पर्श नहीं करती हूँ तब मैं क्या करूँ?

विहस्य वृद्धां तां प्राह किं व्रतेन कृतेन ते।
या परप्राणरक्षार्थं स्वीयं त्यक्त्वा बहिर्गता॥१०१॥

इस पर हँसकर उस बूढ़ी ने कहा कि तेरे व्रत करने से क्या? जब तुम अपने लोगों को छोड़कर दूसरे का प्राण बचाने के लिए बाहर चली गयी?

मा मैवं देवि वक्तव्यं करुणाकोमलो हरिः।
यो दुःखी परदुःखेन तस्य नूनं स दुःखहा॥१०२॥

यह सुनकर सोमा ने कहा कि हे देवी! ऐसा न कहें। श्रीहरि करुणा से कोमल हैं। जो दूसरे के दुःख से दुःखी होते हैं, उसका दुःख तो वे भगवान् हर लेते हैं।

पुनर्ददर्श सा यान्ती तूलभारवतीं स्त्रियम्।
तयाप्युक्ता तथैवाहं तूलकं न स्पृशाम्यहम्॥१०३॥
तया तथैव हसिता सा सस्मार जनार्दनम्।

उसे फिर रूई लेकर आती हुई एक स्त्री दिखाई पड़ी। उस स्त्री ने भी भार उतार देने के लिए कहा तो सोमा ने उसे भी वहीं उत्तर दिया कि मैं इस व्रत में रुई करती। इस पर वह भी हँसने लगी। तब सोमा ने जनार्दन का स्मरण किया।

ततोऽश्वत्थतरुं[1] प्राप्य नदीतीरभवं पथि॥१०४॥
स्नात्वा विष्णुं समभ्यर्च्य शर्कराभिः प्रदक्षिणम्।
सा चकार महाभागा तथैवाष्टोत्तरं शतम्॥१०५॥

वह नदी के किनारे पर एक पीपल के वृक्ष के नीचे पहुँची और स्नान कर विष्णु की आराधना कर शक्कर हाथ में लेकर एक सौ आठ बार परिक्रमा करने लगी।

भीष्म उवाच।

यथा प्रदक्षिणं राजन् कृतं शर्करहस्तया।
तथा ते जीविताः सर्वे पतिजामातृपुत्रकाः॥१०६॥
सततं श्रीःसमायुक्तं तद्गृहं च विशेषतः[2]।
यदायाता[3] महाभागा सोमा स्वभवनं प्रति॥१०७॥
जीवितं प्रेक्ष्य भर्त्तारं पुत्रं जामातरं तथा।
अतुलं सुखमासाद्य जगाम कृतकृत्यताम्॥१०८॥
प्राणिपत्य स्नुषाः सर्वाः प्रपच्छुस्तां यशस्विनीम्।
मृतास्ते निश्चितं देवि पतिजमातृपुत्रकाः॥
जीविताश्च पुनः कस्मादाश्चर्यं तद्वदस्व मे[4]॥१०९॥

---

1. बिल्वदलं। 2. सततं च श्रिया युक्तं तद्गृहं सुविशेषतः। 3. अथायाता। 4. देवि तद्वद।

जैसे उसने हाथ में शक्कर लेकर परिक्रमा की वैसे उसके पति, पुत्र तथा दामाद जीवित हो उठे। उसके घर में हमेशा विशेष रूप से लक्ष्मी का वास हो गया। तब सोमा अपने घर पहुँची और पति, पुत्र तथा दामाद को जीवित देखकर अपूर्व सुख पाकर धन्य हो गयी। उसकी पतोहुओं ने उसे प्रणाम कर पूछा कि हे देवी! ये आपके पति, पुत्र और सब तो निश्चित रूप से मर गये थे, तब ये कैसे जीवित हो उठे? यह आश्चर्य कैसे हुआ, यह मुझे कहें।

सोमोवाच।

गुणवत्यै मया दत्तं व्रतराजस्य पुण्यकम्॥
मृतास्तेन विपाकेन पतिजामातृपुत्रकाः॥११०॥
मूलकं न मया स्पृष्टं तूलकन्न च वा पथि[1]।
व्रतञ्च विहितन्तेन पुण्येनैते[2] चिरायुषः॥१११॥
क्रियतां भवतीभिश्च व्रतराजो विधानतः।
भविष्यति न वैधव्यं सौभाग्यं स्यात्तथा महत्[3]॥११२॥
यदि कश्चित्प्रमादेन कदाचिदुपपद्यते[4]।
भुवि तेऽपि प्रसादेन चिरायुः स्यान्न संशयः॥११३॥

सोमा बोली– गुणवती को मैंने इस व्रतराज का पुण्य दिया था, इसलिए मेरे पति, पुत्र और दामाद मर गये। रास्ते में मैंने मूली और रुई का स्पर्श नहीं किया और यह व्रत विधानपूर्वक सम्पन्न किया। इसके पुण्य से ये सभी दीर्घायु हो गये। तुमलोग भी यह व्रत विधान के साथ करो। इससे वैधव्य नहीं होगा और बड़ा सौभाग्य होगा। यदि कभी प्रमादवश कोई वैधव्य होगा भी तो संसार में इसके प्रताप से उसका पति दीर्घायु होगा।

भीष्म उवाच

स्नुषाश्च[5] कारयामास तदा सोमाव्रतेश्वरम्।
भुक्त्वा भोगान् बहून् सर्वान् पुत्रपौत्रादिभिः सह॥११४॥
सर्वोपरिगता सोमा[6] विष्णुलोकमवाप सा।
इत्येवं[7] कथितं राजन् विष्णुभक्ताय ते सदा॥११५॥
यथोक्तमेतन्माहात्म्यं स्मृतमृत्युविनाशनम्।
सोमाव्रतप्रभावेण जातं वैधव्यभञ्जनम्[8]॥११६॥

भीष्म बोले– सोमा की पतोहुओं ने भी सोमवती अमावस्या का व्रत किया और पुत्र-पौत्र आदि के साथ अनेक प्रकार के सुखों का भोग कर सबसे ऊपर हो गयी और विष्णुलोक चली गयी। हे राजन्! आप विष्णु के भक्त हैं, इसलिए मैंने जैसा माहात्म्य कहा गया है, वैसा कहा। इसके श्रवण से अपमृत्यु नहीं होती है। सोमा के व्रत के प्रभाव से वैधव्य का योग छुट गया।

---

1. न मया। 2. पुण्येनैव। 3. सौभाग्यमतुलं तथा। 4. यदि कश्चित् प्रमादेन विपद्येत यदा तदा। सोऽपि व्रतप्रभावेण। 5. स्नुषास्तु। 6. सर्वैः परिवृतास्तैस्तु। 7. इत्येतत् 8. व्रतं वैधव्यनाशनम्।

युधिष्ठिर उवाच।

अस्य त्वं व्रतराजस्य विधिं वदस्व विस्तरात्[1]।
कर्त्तव्यं केन कौरव्य नारीभिः पुरुषेण वा॥११७॥

युधिष्ठिर बोले– हे कुरुश्रेष्ठ! इस व्रतराज का विधान विस्तार से बतलायें। हे कुरुनन्दन! यह व्रत किस प्रकार से नारी अथवा पुरुष के द्वारा किया जाना चाहिए।

भीष्म उवाच।

अमावास्या तिथिः पार्थ या स्यात् सोमसमन्विता।
तदा पुण्यतमः कालो देवानामपि दुर्ल्लभम्॥११८॥
प्रातरुत्थाय नारीभिः स्नानं कार्यं जलाशये।
स्नात्वा मौनेन कौशेयं परिधाय सितं नवम्॥११९॥
गत्वाश्वत्थस्य तूर्णं वै समीपं कुरुनन्दन।
शालग्रामशिलान्ते[2] वा पूजा कार्या प्रयत्नतः॥२०॥

भीष्म बोले– हे पार्थ जिस दिन अमावस्या तिथि सोमवार से युक्त हो, उस दिन इस व्रत के लिए सबसे पुनीत समय है। प्रातःकाल नारियाँ उठकर जलाशय में स्नान कर नवीन रेशमी का वस्त्र पहनकर मौन व्रत धारण करते हुए पीपल के वृक्ष के समीप शीघ्र जाकर शालग्राम शिला पर प्रयत्नपूर्वक पूजन करे।

व्यक्ताव्यक्तस्वरूपाय सृष्टिस्थित्यन्तकारिणे।
आदिमध्यान्तहीनाय विष्णवे ते नमो नमः॥१२१॥

"व्यक्त रहते हुए भी अव्यक्त रहनेवाले, सृष्टि, पालन एवं विनाश करनेवाले, आदि मध्य एवं अन्त से रहित जो विष्णु हैं, उन्हें प्रणाम।"

एवं सम्पूज्य देवेशं पीतवस्त्रादिभिः[3] फलैः।
कुसुमैर्विविधैश्चैव भक्ष्यभोज्यैर्यथाविधि॥१२२॥
अश्वत्थपूजनं कार्यं प्रोक्तमन्त्रेण पाण्डव।
ततः प्रदक्षिणं कार्यं यावदष्टोत्तरं शतम्॥१२३॥
मौक्तिकैः काञ्चनै रौप्यैर्हीरकैर्मणिभिस्तथा।
काँस्यपात्रैस्तथा ताम्रैर्भक्ष्यभोज्यैः पृथक् पृथक्॥१२४॥

इस प्रकार देव की पूजा पीले रंग के वस्त्र, फल, विभिन्न प्रकार के फूल आदि से कर उक्त मन्त्र से पीपल के वृक्ष की पूजा करें। तब मोती, सोना, चाँदी, हीरा, मणि काँसा के पात्र, अथवा ताँबा के पात्र से खाद्य पदार्थों से पीपल के वृक्ष की एक सौ आठ बार प्रदक्षिणा करें।

तद्वस्तु पार्थ विप्रेभ्यः पुरन्ध्रीभ्यश्च दीयते[4]।
विप्रेभ्यश्च यथाशक्ति दक्षिणां भोजनं तथा॥१२५॥

वे वस्तुएँ ब्राह्मणों तथा सुहागिन स्त्रियों को दान करें। ब्राह्मणों को यथाशक्ति दक्षिणा तथा भोजन दें।

---

1. सुविस्तरम्। 2. शालिग्रामशिलायान्तु। 3. पीतवस्त्रैर्यवैः। 4. दीयताम्।

निरामिषं ततो भुक्त्वा सकृन्नारीजनैः[1] सह।
एवं कृत्वा व्रतमिदं सर्वान् कामान् समस्नुते[2]॥१२६॥
[3]इति ते कथितं राजन् व्रतराजविधिर्मया।
द्रौपदीञ्च सुभद्राञ्च कारयस्व तथोत्तराम्॥१२७॥
उत्तरागर्भसम्भूतो[4] लप्स्यते चिरजीविताम्[5]।

तब नारियों के साथ बैठकर एक बार निरामिष भोजन करें। इस प्रकार यह व्रत करके सभी कामनाएँ प्राप्त होतीं हैं। हे राजन्! मैंने इस व्रतराज की विधि इस प्रकार आपको सुनाई। द्रौपदी, सुभद्रा तथा उत्तरा से यह व्रत कराओ। इससे उत्तरा के गर्भ से उत्पन्न शिशु चिरजीवन प्राप्त करेगा।

युधिष्ठिर उवाच।

या स्वल्पविभवा नारी काञ्चनाद्यैर्विना कथम्।
करिष्यति व्रतं सा वै कथं पूर्णं फलं लभेत्[6]॥१२८॥

युधिष्ठिर बोले– जिस नारी के पास कम विभव हो, वह सोना आदि के विना कैसे यह व्रत कर सकेगी और उसका पूर्ण फल कैसे प्राप्त होगा।

भीष्म उवाच।

फलपुष्पैस्तथा भक्ष्यैर्वस्त्रैर्वाभरणादिभिः[7]।
कुर्यात् प्रदक्षिणं राजन्[8] सापि पूर्णं फलं लभेत्॥१२९॥

फल, फूल, खाद्य पदार्थ, वस्त्र या आभूषण आदि से भी यदि प्रदक्षिणा की जाये, तो इसका भी पूर्ण फल प्राप्त होता है।

या काचिद् बालविधवा किञ्चिज्जन्मान्तरेप्सितम्।
प्राप्नोति नात्र सन्देहो व्रतराजप्रभावतः[9]॥१३०॥
राजन् सा रजकी जात्या शौचाचारविवर्जिता।
तादृक् प्रभावा संयाता वासुदेवप्रसादतः॥
किं पुनर्ब्राह्मणी राज्ञी वैश्या वा यदि जायते॥१३१॥
व्रतराजमिमं करोति नारी क्रियमाणं यदि वा विलोक्यते तया।
निखिलं परिहार्य पातकं सा, नियतं विष्णु पुरे निवास मेति॥१३२॥

जो कोई बालविधवा हो और दूसरे जन्म में जो कुछ पाने की इच्छा हो, उसे इस व्रत से सब कुछ मिल जाता है, इसमें सन्देह नहीं। हे राजन्! धोबिन जाति की बह सोमा जो शुद्धता और आचार से रहित है, उसने भी जब इस प्रकार का प्रभाव पा लिया तब फिर ब्राह्मणी, क्षत्रिया अथवा वैश्य जाति की स्त्रियाँ किस प्रकार का प्रभाव प्राप्त कर लेंगी! जो नारी यह व्रत करती है या पूजन का दर्शन करती है, वह सभी पापों का त्याग कर नित्य विष्णुलोक में निवास करने लगती है।

इति भविष्यपुराणे सोमवारान्वितामावास्या कथा सम्पूर्णा॥

---

1. गणैः। 2. एवं कृत्वा व्रतं दिव्यं सर्वेषामतिदुर्ल्लभम्। 3. भीष्म उवाच। एष० 4. संस्थस्तु। 5. जीवितं चिरात्। 6. पूर्णं लभेत् फलम्। 7. वस्त्रैराभरणादिभिः। 8. प्रदक्षिणाम्। 9. मुद्रित प्रति में यह श्लोक अनुपलब्ध।